हिंदी आलोचना के विकास में नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' पत्रिका का योगदान

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग से
पी-एच.डी. की उपाधि हेतु प्रस्तावित

शोध-प्रबंध-सार

2014

निर्देशक

डॉ. प्रदीप कुमार सक्सेना
प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़

शोधार्थी

जावेद आलम

हिंदी विभाग, कला संकाय
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ०प्र०) 202002 (भारत)

THESIS

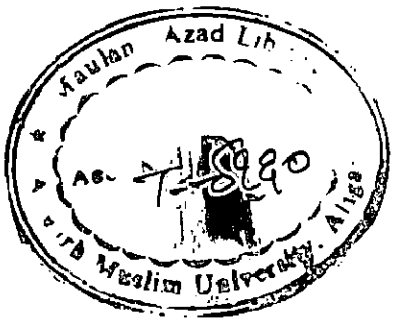

शोध-प्रबंध-सार

जिस समय से हिंदी साहित्य के आधुनिक काल का आविर्भाव माना जाता है, ठीक वही समय हिंदी की पत्रकारिता की शुरूआत का भी है। दूसरे शब्दों में कहें तो, हिंदी साहित्य में आधुनिक चेतना के आविर्भाव और हिंदी पत्रकारिता का आरंभ एक साथ एवं एकदूसरे के समानांतर ही हुआ है। यदि ध्यान दिया जाए तो स्पष्ट होगा कि, आधुनिक जीवन-मूल्य और उसकी चेतना को तीव्रतर करने तथा उसे विस्तृत फलक देने में पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन की अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। इसीलिए हिंदी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल की शुरूआत की जब कभी भी पड़ताल की जाती है, उसमें पत्र-पत्रिकाओं के अवदान को अवश्य ही रेखांकित किया जाता है।

पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन के साहित्य के विकास में जो सबसे क्रांतिकारी परिवर्तन किया, वह है साहित्य को कुलीनतावादी और सामंतवादी कटघरे से बाहर निकालना। इस प्रकार, पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन ने साहित्य के पाठक-वर्ग को ही बदल देने का कार्य किया। अब साहित्य किसी एकांत साधना अथवा राजदरबार के शिष्ट समुदाय तक सीमित रहनेवाली कोई चीज नहीं था, बल्कि उसका संबंध व्यापक जनसमुदाय से हो गया। पत्र-पत्रिकाओं ने साहित्य को अगणित जनता के समक्ष प्रस्तुत करने का कार्य किया। अब आधुनिक काल में आकर साहित्य का सवाल जनसाधारण का सवाल बनकर उभरा। कहने की आवश्यकता नहीं कि साहित्य को कुलीनतावादी एवं सामंतवाद के संकीर्ण दायरे से बाहर निकालने की प्रक्रिया स्वयं आधुनिक चेतना और उसके परिवर्तनकारी मूल्यों की प्रतीति कराता है। ठीक इसी प्रकार पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से साहित्य को व्यापक जनसमूह से जोड़ने की प्रक्रिया और उसे जनमानस की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाना लोकतांत्रिक मूल्यों की अवस्थिति का ही बोध कराता है। साहित्य के व्यापक जनसमुदाय से जुड़ते

THESIS

ही उसके लक्ष्य, उसके निहितार्थ एवं उसके सीमा-विस्तार में तुरंत ही बदलाव परिलक्षित किया जा सकता है। साहित्य का रूप भी वही नहीं रह जाता, जो कभी पूर्व में था। वहाँ भी साहित्य-रूपों में नवीनता का आग्रह स्पष्ट लक्षित किया जा सकता है। व्यापक जनसमूह जब अपनी विचार-अनुभूतियों को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाता है तो वहाँ साहित्य-रूपों में न केवल बदलाव परिलक्षित किया जा सकता है, बल्कि अभिव्यक्ति के नवीन-रूपों का आविर्भाव भी देखने को मिलता है। यही कारण है कि हिंदी साहित्य के विकास के आधुनिक काल में अभिव्यक्ति के वैविध्यपूर्ण रूप और नवीन-से-नवीन विधाओं को परिलक्षित किया जा सकता है। साहित्य के इन वैविध्यपूर्ण रूप और नवीन-से-नवीन विधाओं को जन्म देने और किसी विधा को विकसित करने में पत्र-पत्रिकाओं की अत्यंत उल्लेखनीय और निर्णायक भूमिका रही है। आधुनिक चेतना और उसकी वाहक पत्र-पत्रिकाओं ने यह बोध कराया कि हम अपनी अभिव्यक्ति किसी निश्चित नियमों से बद्ध साहित्य-रूप अथवा विधा में ही करने के लिए बाध्य नहीं हैं; हमें जीवन के व्यापक पक्ष को स्पष्ट करने के लिए सदैव 'महाकाव्य' की सर्गबद्ध ढाँचे की ज़रूरत नहीं है, हम उसे किसी 'उपन्यास' का रूप दे सकते हैं, उसे किसी 'लंबी कहानी' अथवा किसी 'कहानी' के संश्लिष्ट रूप में भी अभिव्यक्ति दे सकते हैं। हम अपनी बात सिर्फ 'पद्य' में ही नहीं, अपितु 'गद्य' में भी कह सकते हैं। वस्तुतः यह हमारी चेतना का आधुनिकीकरण और जनतंत्रीकरण की प्रक्रिया से होकर गुजरना है।

स्पष्ट है कि, साहित्य की विभिन्न विधाओं और अभिव्यक्ति के विविध रूपों के उद्‌भव और विकास में पत्र-पत्रिकाओं का अन्यतम योगदान है। हिंदी में प्रकाशित 'कविवचन सुधा', 'हरिश्चंद्र चंद्रिका', 'ब्राह्मण', 'हिंदी प्रदीप', 'सरस्वती', 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका', 'हंस', 'प्रभा', 'मतवाला', 'नया साहित्य', 'कल्पना', 'धर्मयुग', 'आलोचना', 'सारिका', 'पूर्वग्रह', 'समालोचक' आदि जैसी पत्र-पत्रिकाओं का हिंदी साहित्य की विभिन्न विधाओं के आविर्भाव और उनके विकास में अन्यतम

योगदान है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि आधुनिक हिंदी गद्य की विविध विधाओं जैसे 'कहानी', 'निबंध', 'जीवनी' तथा साहित्य की अन्य विधाओं की भाँति हिंदी में आलोचना का प्रारंभ भी पहले-पहल पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से ही हुआ। आधुनिक चेतना एवं लोकतंत्रीकरण की प्रक्रिया की यदि कोई सर्वोत्तम देन है तो वह आलोचना जैसा साहित्यिक गद्य रूप ही है। वास्तव में, आलोचना जैसे गद्य रूप का उद्‌भव लोकतंत्रीकरण की प्रक्रिया के साथ होता है, और उसका विकास हिंदी भाषी समाज में विकसित हो रहे लोकतंत्र की सांस्कृतिक प्रक्रिया के समानांतर भी रखकर देखा जा सकता है। क्योंकि वस्तुतः आलोचना स्वयं एक लोकतांत्रिक प्रक्रिया है।

ग़ौरतलब है कि हिंदी की साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में रचनात्मक साहित्य और उसकी विविध विधाओं पर केंद्रित पत्रिकाएँ तो बहुत रही हैं, किंतु शुद्ध आलोचना के क्षेत्र की पत्रिकाओं का प्रायः अभाव रहा है। यह अभाव हमें 1950 ई. तक की हिंदी की साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में दिखाई पड़ता है। सन् 1951 ई. से 'आलोचना' त्रैमासिक के प्रकाशन से पूर्व हिंदी की साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में विशुद्ध आलोचना की कोई पत्रिका ही नहीं थी। यही कारण है कि हिंदी की साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में, विशेषकर हिंदी आलोचना के क्षेत्र में 'आलोचना' पत्रिका के संपादन-प्रकाशन का ऐतिहासिक महत्त्व है। हिंदी की साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में 'आलोचना' पत्रिका के प्रकाशन को छोटाराम कुम्हार 'एक युगांतरकारी घटना' के रूप में देखते हैं।

'आलोचना' पत्रिका 'राजकमल प्रकाशन-नई दिल्ली' जैसे प्रकाशन संस्थान से प्रकाशित होती रही है। 'आलोचना' पत्रिका का प्रवेशांक श्री शिवदान सिंह चौहान के संपादन में अक्टूबर, 1951ई. में प्रकाशित हुआ। इस प्रकार शिवदान सिंह चौहान इस पत्रिका के संस्थापक-संपादक हुए। शिवदान सिंह चौहान के उपरांत इसके संपादन का दायित्व कई संपादकों के हाथों में आया।

शिवदान सिंह चौहान के बाद अप्रैल, 1953ई. से धर्मवीर भारती, रघुवंश, ब्रजेश्वर वर्मा और विजयदेवनारायण साही ने संयुक्त रूप से एक संपादक-मंडल के रूपमें इसका संपादन किया। इसकी संपादन-व्यवस्था में अप्रैल, 1956 ई0 में फेरबदल किया गया, अब 'आलोचना' का संपादन आचार्य नंददुलारे वाजपेयी के हाथों में आया। इसी तरह 'आलोचना' का संपादन-दायित्व में पुनः फेरबदल हुआ और शिवदान सिंह चौहान 'आलोचना' के फिर से संपादक बनाए गए। इस बीच 'आलोचना' का प्रकाशन कई बार बाधित हुआ, और वह बाधित होकर भी प्रकाशित होती रही। सन् 1967 ई0 से 'आलोचना' पत्रिका का संपादन-दायित्व नामवर सिंह के हाथों में आया। इस प्रकार, 'आलोचना' पत्रिका अपने प्रकाशन से नामवर सिंह के हाथों में आने तक कई संपादकीय विवेकों से होकर गुजरी, कई संपादकीय जगत के उलटफेर उसने देखे, कई बार बीच-बीच में उसका प्रकाशन बाधित हुआ।

'आलोचना' का संपादन-दायित्व जब से नामवर सिंह के हाथों में आया इस संपादकीय उलटफेर से उसे मुक्ति मिली। यानी नामवर सिंह के संपादन में 'आलोचना' सन् 1967 से सन् 1990 ई0 तक की दीर्घ-अवधि तक संपादित-प्रकाशित होती रही। उसे प्रकाशन की बाधा से भी मुक्ति मिली। 'आलोचना' जैसी सहित्यिक विधा पर केंद्रित एक पत्रिका का लगभग चौबीस वर्षों तक निरंतर एक संपादक द्वारा संपादन, हिंदी की साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में वास्तव में युगांतरकारी घटना है। इसका निरंतर प्रकाशन ही महत्त्वपूर्ण घटना नहीं है, बल्कि इस दीर्घ अवधि में हिंदी के साहित्यिक पटल पर उसकी सक्रिय उपस्थिति रही है। नामवर सिंह स्वयं हिंदी आलोचना के प्रमुख स्तंभ हैं, उनके संपादन में इतने वर्षों तक 'आलोचना' के प्रकाशन ने हिंदी आलोचना के क्षेत्र में अवश्य ही कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य किए होंगे, जिससे हिंदी आलोचना की दिशा को परिवर्तित करने का सुयोग बना होगा; ज़रूर ही उसने कुछ ऐसे कार्य भी किए होंगे, जिससे हिंदी आलोचना

'आलोचना' पत्रिका की वह वैचारिक पृष्ठभूमि क्या रही है, जिसके कारण नामवर सिंह चौबीस वर्ष तक इसका संपादन करते रहे, और हिंदी जगत में गूढ़ सामग्री युक्त पत्रिका की सक्रिय उपस्थिति बनी रही?? वस्तुतः हिंदी आलोचना के विकास में नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' त्रैमासिक का योगदान किस रूप में रहा है, यही इस शोध कार्य में दिखलाने का प्रयास किया गया है। इसलिए यह कहना अनुचित न होगा कि, प्रस्तुत शोध-कार्य अपनी अध्ययन की पद्धति और विषय की प्रकृति में पहला और मौलिक कार्य है। नामवर सिंह के प्रधान संपादकत्व में निकलने वाली 'आलोचना'सहस्त्राब्दी के अंक इस शोध-कार्य की सीमा के अंतर्गत नहीं आते हैं, इसलिए उनका उपयोग इस शोध-कार्य में नहीं किया गया है।

प्रस्तुत विषय पर शोध-कार्य करने हेतु इस अध्ययन को सात अध्यायों में विभक्त किया गया है। यह विभाजन केवल अध्ययन की सुविधा के लिए ही नहीं है, बल्कि यह विभाजन शोध-कार्य की प्रकृति और आवश्यकता के अनुरूप भी है। आवश्यकतावश इन अध्यायों को उपशीर्षकों में बाँट कर भी देखा गया है।

इस शोध-कार्य के अध्याय एक'नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' में प्रस्तुत प्रमुख साहित्यिक बहसें और मुद्दे', में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि साहित्यिक बहसों की साहित्य के विकास में क्या भूमिका होती है? साहित्यिक बहसों को चलाने में पत्र-पत्रिकाओं की किस प्रकार की निर्णायक भूमिका होती है। इस पर प्रकाश डालते हुए यह स्पष्ट किया गया है, उन साहित्यिक बहसों से 'आलोचना' का विकास किस रूप में होता है। इन्हीं संदर्भों में 'आलोचना' पत्रिका की प्रमुख साहित्यिक बहसों को ही इस अध्याय में प्रस्तुत किया गया है। अन्य अवांतर साहित्यिक बहसें जो 'आलोचना' पत्रिका में बहुत दूर तक नहीं चली हैं उन्हें विस्तार भय से शोध-प्रबंध की सीमा के कारण उनका संकेत भर किया गया है। इस अध्याय से स्पष्ट होगा कि

साहित्यिक बहसों का हिंदी आलोचना के विकास में कितना अन्यतम योगदान है और नामवर सिंह ने अपने संपादकीय विवेक से उसे कितनी सतर्कता और सजग होकर प्रस्तुत कर सकें हैं।

द्वितीय अध्याय जिसका शीर्षक 'मार्क्सवादी आलोचना की नई बहसें और 'आलोचना' पत्रिका', है। इस अध्याय मे नामवर सिंह के संपादन में मार्क्सवादी आलोचना की नवीन बहसों को किस प्रकार प्रस्तुत किया है, और उन नई बहसों की तत्कालीन साहित्यिक परिवेश में क्या आवश्यकता रही है? और हिंदी आलोचना के विकास में उनका क्या महत्त्व रहा है इन्हींप्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास किया गया है।

'परंपरा का मूल्यांकन और 'आलोचना' पत्रिका' इस शोध प्रबंध में तृतीय अध्याय के रूप में प्रस्तुत किया गया है। परंपरा का मूल्यांकन हिंदी आलोचना की महत्त्वपूर्ण प्रवृत्तियों में से एक है। हिंदी आलोचना में परंपरा के मूल्यांकन के कई रूप देखने को मिलते हैं। नामवर सिंह के लिए परंपरा का मूल्यांकन का क्या अर्थ है, उन्होंने उसे 'आलोचना' पत्रिका में किस प्रकार समायोजित किया है, इसे स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। परंपरा के मूल्यांकन की प्रवृत्ति के उस रूप से हिंदी आलोचना को क्या दिशा मिली है, इसे भी यहाँ देखा जा सकता है। परंपरा के मूल्यांकन के संदर्भ में हीं 'दूसरी परंपरा की खोज' के प्रश्न, और साहित्य की परंपरा में कैनन निर्माण के सवाल को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

चतुर्थ अध्याय यहाँ 'समकालीन रचनाशीलता और 'आलोचना' पत्रिका शीर्षक से देखा जा सकता है। समकालीन रचनाशीलता से टकराहट और उससे सक्रिय संवाद ही आलोचना को आलोचना बनाता है। इस अध्याय में आलोचना की इस प्रवृति को स्पष्ट लक्षित किया जा सकता हैं। 'आलोचना' के माध्यम से नामवर सिंह समकालीन रचनाशीलता से किस प्रकार सक्रिय संवाद करते रहे? आलोचना के प्रकाशन के समानांतर चलनेवाली समकालीन कविता, कहानी, उपन्यास,

नाटक, आलोचना आदि की स्थिति क्या रही है, और 'आलोचना' पत्रिका में उसे किस रूप में प्रस्तुत किया गया हैइस अध्याय में विस्तार से विवेचित विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

इस शोध-कार्य के पाँचवें अध्याय'आलोचना के विशेषांकः महत्त्व और वैशिष्ट्य' में नामवर सिंह ने किन रचनाकारों, विषयों और विधाओं पर विशेषांक आयोजित किए हैं, अथवा किस रचनाकारों पर स्मृति अंक, विशेष सामग्री आदि का प्रकाशन किया और उनका हिंदी आलोचना में क्या मह त्त्व है? इन्हीं प्रश्नों पर केंद्रित होकर इस अध्याय में विचार प्रस्तुत किया गया है।

'नामवर सिंह का संपादकीय विवेक और 'आलोचना' का संपादन' शीर्षक छठे अध्याय में नामवर सिंह के संपादकीय विवेक की महत्ता की पड़ताल की गई है, और उससे 'आलोचना' पत्रिका किस रूप में अपना आकार ग्रहण करती रही एवं उसका हिंदी आलोचना में क्या महत्त्व है, इसे स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

सातवाँ अध्याय जो कि इस शोध-कार्य का ही शीर्षक है. यानी 'हिंदी आलोचना के विकास में नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' पत्रिका का योगदान' में हिंदी आलोचना में नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' के संपूर्ण अवदान को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। छः अध्यायों में तो अवदान को विस्तार से उल्लेख किया गया है। इस अध्याय में छः अध्यायों में आए महत्त्वपूर्ण मुद्दों के अतिरिक्त उन तथ्यों को प्रस्तुत करने का कार्य किया गया है, जो इन अध्यायों में नहीं आ सके हैं, किंतु वे तथ्य 'आलोचना' पत्रिका के हिंदी आलोचना में अन्यतम योगदान को स्पष्ट कर सके है, इसी लिए इस अध्याय में उसे समग्रता से स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

'उपसंहार' इस प्रबंध में उपसंहार के रूप में ही है यानी शोध-कार्य की समाप्ति पर अपने निष्कर्षों को स्पष्ट किया गया है। उपसंहार निष्कर्ष के रूप में ही प्रस्तुत हैं, इसलिए इसमें पूर्व की कही हुई बातों का दुहराव भी देखा जा सकता है। अंत में, संदर्भ ग्रंथ की सूची भी प्रस्तुत की गई।

THESIS

जिससे शोध-कार्य की वस्तुनिष्ठता और आवश्यकता की पूर्ति की जा सके।

इस शोध-कार्य में कुछ पक्षों पर ध्यान नहीं दिया जा सका है, जिसे इस अध्ययन की सीमा के रूप में ही देखा जाना चाहिए। इस अध्ययन में नामवर सिंह से पूर्व 'आलोचना' के संपादकों की संपादन-कला आदि पर अलग से व्यवस्थित कोई अध्याय नहीं है, बल्कि आवश्यकतानुरूप अलग-अलग अध्यायों में उनकी चर्चा तभी आई है, जब नामवर सिंह की संपादन-कला से उनमें संपादकों में भिन्नता स्पष्ट करना ध्येय रहा है।

इसके अतिरिक्त, यहाँ सूचित करना अत्यावश्यक है कि नामवर सिंह ने 'आलोचना' का संपादन करते हुए तीन सहयोगियों की सहायता ली थी। जिनमें विष्णु खरेजिनका नाम पत्रिका पर सह-संपादक के रूप में प्रकाशित नहीं हुआ था। दो अन्य सहयोगियों के रूप में 'नंदकिशोर नवल' और परमानंद श्रीवास्तव का नाम 'आलोचना' के पृष्ठों पर 'सह-संपादक' के रूप में प्रकाशित होता था। यह सह-संपादक अलग-अलग समय में 'आलोचना' के संपादन से जुड़े। इनकी 'आलोचना' पत्रिका के संपादन में उल्लेखनीय भूमिका रही है. किंतु इस शोध-कार्य में इन सह-संपादकों की क्या भूमिका रही है, और योगदान रहा है, इस पर विचार नहीं किया गया है।

इसी प्रकार से राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली में प्रबंधकीय अथवा व्यवस्थापकीय फेरबदल पर, या व्यवस्थापक और संपादक के बीच के निजी प्रसंगों और आपसी कलह पर प्रायः ध्यान नहीं दिया गया है। यहाँ 'आलोचना' पत्रिका और संपादकीय विवेक का हिंदी आलोचना के विकास में क्या अवदान है। मूल सामग्री और तथ्यों के धरातल पर ही कोई बात कहने का प्रयत्न किया गया है।

इस शोध-कार्य की एक सीमा और रही है, वह यह कि 'आलोचना' में प्रकाशित 'पुस्तक-समीक्षाओं' पर प्रायः सर्वेक्षणात्मक या मोटी बातों को ही स्पष्ट किया गया है। इस पर

अत्यंत गंभीरता से विचार नहीं किया गया है। जबकि इस पर अलग से कार्य करने की संभावना बनी हुई है। हिंदी 'आलोचना' में पुस्तक-समीक्षाओं की अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है, किंतु इस पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। 'आलोचना' पत्रिका का अत्यंत महत्त्वपूर्ण हिस्सा पुस्तक समीक्षाओं का है, इसलिए इस पर एक लघु शोध-कार्य की आवश्यकता बनी हुई है। इसके अतिरिक्त, हिंदी कविता के विकास में 'आलोचना' पत्रिका में प्रकाशित कविताओं की भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका है, इस विषय पर भी शोध-कार्य करने की आवश्यकता बनी हुई है। इसके अतिरिक्त, 'आलोचना' संपादन में सहयोगी की भूमिका का निर्वाह कर रहे विद्वानों का उसके संपादन में क्या महत्त्वपूर्ण अवदान रहा है इस पर भी शोध-कार्य किया जा सकता है।

इस शोध-कार्य में शोध की कई अध्ययन पद्धतियों का आवश्यकतानुरूप प्रयोग किया गया है। यहाँ ऐतिहासिक, तुलनात्मक के साथ निगमनात्मक और आगमनात्मक पद्धति का प्रयोग भी किया गया है। तथ्यों के आधार पर इस शोध-प्रबंध में ही कोई निष्कर्ष निकाला गया है संदर्भ-सूचनाओं की मानक प्रस्तुति के लिए 'एम. एल. ए. हैंडबुक्स फॉर राइटर्स ऑफ रिसर्च पेपर (सातवॉ संस्करण)' भारतीय शोधार्थियों वाला, नई दिल्ली, के दिशा-निर्देश को ही आधार रूप में स्वीकार किया गया है, जहाँ कुछ भिन्नता अपनाई गई. उसकी जानकारी संक्षेप और संकेत-चिह्न सूची तथा अन्य सूचनाएँ शीर्षक पृष्ठ पर उल्लिखित हैं।

इस संदर्भ में रेखांकित करने योग्य तथ्य यह है कि नामवर सिंह के संपादन के पूर्व 'आलोचना' के संपादकों का संपादन का काल सबसे अस्थिर, उठापटक और अल्पायुवाला था, वस्तुतः इसे आलोचना के प्रकाशन का प्रथम चरण कहा जाना ही समीचीन है और इसकी अवधि 1951-1967 ई. तक मानी जानी चाहिए। इसके उपरांत नामवर सिंह के संपादन में 'आलोचना' 1967-1990 ई. तक संपादित होती रही है, इसलिए इस दीर्घ अवधि को 'दूसरा चरण' कहना चाहिए। इस दीर्घ अवधि तक 'आलोचना' की पत्रिका का संपादन करना स्वयं उस संपादक के

संपादकीय विवेक की महत्ता को प्रकट करता है। यद्यपि नामवर सिंह के संपादन से पूर्व, पहले चरण के संपादकों ने 'आलोचना' को हिंदी आलोचना की एक महत्त्वपूर्ण पत्रिका के रूप में स्थापित किया था, किंतु नामवर सिंह ने उसका संपादन करते हुए उसके महत्त्व को ऐतिहासिक एवं चिरस्थायी बना दिया। उसे हिंदी आलोचना की सर्वोत्कृष्ट पत्रिका के रूप में स्थापित किया। नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' पत्रिका को लेकर इस अध्ययन में मेरी सीमा यह रही है कि उनसे 'पूर्व संपादकों' पर अलग से किसी अध्याय के रूप में व्यवस्थित ढंग से विचार नहीं किया गया है, बल्कि आवश्यकतानुरूप अलग-अलग अध्यायों में नामवर सिंह की संपादन-कला से भिन्नता को स्पष्ट करने में उनका विवेचन-विश्लेषण किया गया है।

नामवर सिंह के संपादन में 'आलोचना' पत्रिका के आते ही जो सबसे बड़ा काम पत्रिका के पक्ष में रहा, वह उसके दीर्घ अवधि तक एक संपादक द्वारा संपादन के रूप में स्थिरता प्राप्त करना था। नामवर सिंह के संपादन से पूर्व 'आलोचना' कई संपादकीय विवेकों से गुजर चुकी थी, प्रकाशन भी बीच-बीच में बाधित हुआ था। इस प्रकार नामवर सिंह के संपादन से पूर्व का काल यानी पहला चरण अस्थिरतायुक्त कई तरह से व्यवधानवाला एवं 'संपादकीय फेरबदल' वाला था। नामवर सिंह के संपादन में आते ही 'आलोचना' को इस प्रकार की अस्थिरता से मुक्ति मिली और वह बिना किसी बाधा के संपादित प्रकाशित हो सकी, जिसके कारण ही हिंदी आलोचना को विकसित करने में वह अपनी निर्णायक भूमिका का निर्वाह कर सकी। छठे अध्याय में इन्हीं सूत्रों को समझने का प्रयास किया गया है।

नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' पत्रिका का वैचारिक आधार मार्क्सवादी-साहित्य- कला चिंतन रहा है, उसने साहित्य की आधुनिकतावादी, कलावादी और व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों की नकारात्मक प्रवृत्तियों से सीधे संघर्ष किया है। इसका सीधा टकराव 'पूर्वग्रह' पत्रिका की या उस

जैसी विचारधारा की पोषक पत्र-पत्रिका से रहा है। नामवर सिंह ने अपने संपादन में 'आलोचना' को सिर्फ कलावादी या व्यक्तिवादी आदि प्रवृत्तियों के ही विरोध का माध्यम नहीं बनाया है, बल्कि साहित्य के प्रति किसी तरह के उग्रवामपंथी रुझान और स्थूल समाजशास्त्रीयता का भी विरोध उन्होंने 'आलोचना' के माध्यम से किया है।

नामवर सिंह ने अपने संपादन में 'आलोचना' के माध्यम से मार्क्सवादी साहित्य और कला-चिंतन के वैचारिक आधार को हिंदी आलोचना में और सुदृढ़ करते हैं। किंतु उनका मार्क्सवादी साहित्य-चिंतन चौथे-पाँचवे दशक के शिवदान सिंह चौहान और रामविलास शर्मा वाला मार्क्सवादी चिंतन नहीं है, और न ही चौथे-पाँचवे दशक के स्तालिनकालीन पश्चिमी मार्क्सवादी साहित्य चिंतन है, जो उस दौर के प्रमुख मार्क्सवादी चिंतक 'हेनरी बारबूस', 'राल्फ फाक्स' आदि के यहाँ दिखाई पड़ता है। इस चौथे-पाँचवें दशक का मार्क्सवादी साहित्य चिंतन अधिकांश पार्टीबद्ध चिंतन था, इस समय का मार्क्सवादी साहित्य-चिंतन और आलोचना में मार्क्सवादी अवधारणाओं को फिट करने का हरसंभव प्रयास किया जा रहा था। जो उस सिद्धांत के चौखटे में फिट नहीं बैठ रहा था, वह प्रतिक्रियावादी सिद्ध किया जा रहा था। वहाँ मार्क्सवादी अध्ययन पद्धति का प्रयोग नहीं किया जा रहा था। इस प्रकार एक 'यांत्रिक मार्क्सवादी' की रूढ़िबद्ध चिंतन-पद्धति मार्क्सवादी कला साहित्य-चिंतन के नाम पर चल रही थी, यह यांत्रिक मार्क्सवाद के कारण जहाँ पश्चिम में एफ. आर. लीविस की नई समीक्षा पद्धति की विजय हुई, वहीं हिंदी आलोचना में मार्क्सवाद के प्रवर्तक शिवदान सिंह चौहान के हाथ से 'आलोचना' का संपादन आधुनिकतावादी, अस्तित्त्ववादी चिंतकों धर्मवीर भारती आदि के 'संपादन-समूह' के हाथ में आ गई थी। यहाँ मार्क्सवादी आलोचना भी यहाँ अपने रूढ़िबद्ध रूप में ही विद्यमान थी। नामवर सिंह ने अपने आलोचनात्मक विवेक के माध्यम से मार्क्सवाद को यांत्रिक और रूढ़िबद्ध चौखटे से बाहर निकालने में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह

अपना स्वरूप किस प्रकार ग्रहण कर सकी हैं इन्हें इस प्रबंध के 'मार्क्सवादी आलोचना की नई बहसें और 'आलोचना' शीर्षक द्वितीय अध्याय में प्रस्तुत किया गया है।

नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' पत्रिका में हिंदी में होनेवाली अन्य साहित्यिक बहसों को भी स्थान मिला है। 'आलोचना' में विभिन्न साहित्यिक मुद्दों और प्रश्नों पर नामवर सिंह ने कई परिसंवाद आयोजित किए। जिनमें 'कविता और राजनीति', रोमांटिक बनाम आधुनिक', 'युवा लेखन पर एक बहस', 'आज के युग में प्रगतिशीलता', 'आलोचना की भाषा' आदि प्रमुख विषय हैं। इसके अतिरिक्त 'आलोचना' में 'साहित्य के समाजशास्त्रीय चिंतन' को प्रस्तावित करने का काम भी 'आलोचना' पत्रिका के ही माध्यम से किया गया है, जिसे इस शोध-प्रबंध में साहित्यिक बहस के रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'हिंदी नवजागरण की संकल्पना पर बहस' शीर्षक अध्ययन में हिंदी नवजागरण की संकल्पना पर विचार प्रस्तुत किया गया है। भाषिक आलोचना व शैली विज्ञान जैसी प्रवृत्ति पर 'आलोचना' ने सबसे पहले अपना ध्यान केंद्रित किया और उसे हिंदी आलोचना में पहले-पहल प्रस्तुत करने का कार्य किया। उपर्युक्त साहित्यिक बहसों और विवेच्य सभी प्रवृत्तियों ने हिंदी आलोचना को किस प्रकार प्रभावित किया है, और हिंदी आलोचना को विकसित करने में उनका क्या योगदान है, इस विषय पर 'नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' में प्रमुख साहित्यिक मुद्दे और बहसें' शीर्षक से प्रथम अध्याय में विस्तृत चर्चा की गई है।

हिंदी में आलोचना विधा की शुरूआत से ही आलोचना की जिन दो प्रवृत्तियों को स्पष्टतः लक्षित किया जा सकता है, उसमें एक प्रवृत्ति 'समकालीन रचनाशीलता से सक्रिय संवाद' की है; तथा दूसरी प्रवृत्ति अपनी परंपरा का अन्वेषण और उसके मूल्यांकन की रही है। हिंदी आलोचना का सर्वांश इन्हीं दो आधारों पर टिका हुआ है। आगे चलकर एक और प्रवृत्ति विकसित हुई वह है किसी 'आलोचक की आलोचना का सम्यक मूल्यांकन'। 'आलोचना' पत्रिका का इन क्षेत्रों में अन्यतम

योगदान है, जिससे हिंदी आलोचना अपना स्वरूप विकसित कर सकी है।

अपनी सांस्कृतिक विरासत अथवा परंपरा के मूल्यांकन के लिए कौन-सी दृष्टि अपनायी जाए इसे नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' पत्रिका में स्पष्ट लक्षित किया जा सकता है। नामवर सिंह ने 'आलोचना' पत्रिका के माध्यम से परंपरा को श्रद्धाविगलित, अंधश्रद्धा, युक्त पूज्यभाव की प्रवृत्ति, और वर्तमान समस्या का हल अतीत में ढूँढनेवाली प्रवृत्ति, पारंपरिक मूल्यों को वर्तमान जीवन पर लागू करनेवाली प्रवृत्ति का जमकर विरोध किया। उन्होंने परंपरा की असंगतियों को त्यागकर उसे अत्यंत गौरवमयी बनाकर प्रस्तुत करनेवाली प्रवृत्ति का प्रतिकार किया है। नामवर सिंह ने 'आलोचना' पत्रिका के माध्यम से एक ऐसी दृष्टि विकसित करने का प्रयत्न किया जो अपने अतीत अथवा अपनी सांस्कृतिक विरासत को उसके सांस्कृतिक संदर्भों मे, युगीन सीमाओं तथा उसके अंतर्विरोधों के बीच रखकर उसके मूल्यांकन का प्रयास करती है, जिससे अतीत की अतीतता को सुरक्षित रखते हुए उसकी 'विगत महत्ता और वर्तमान अर्थवत्ता' को स्पष्ट किया जा सके, जिससे परंपरा की सही छवि प्रस्तुत की जाए। नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' पत्रिका ने भारतेंदु हरिश्चंद्र, मैथिलीशरण गुप्त, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, तथा हिंदी नवजागरण और उसके अग्रदूतों का जो मूल्यांकन प्रस्तुत करने का कार्य किया उसमें इसी आलोचनात्मक रुख का परिचय दिया गया है। 'आलोचना' पत्रिका ने अपनी परंपरा के मूल्यांकन के प्रति जिस आलोचनात्मक विवेक का परिचय दिया है, वह हिंदी नवजागरण और उसके अग्रदूतों एवं परंपरा का समग्रता में अध्ययन करने का मार्ग प्रशस्त करती है। इस प्रकार, नामवर सिंह द्वारा संपादित 'आलोचना' पत्रिका में परंपरा के मूल्यांकन के प्रति जिस दृष्टि को विकसित करने का प्रयत्न किया गया है, वह न केवल हिंदी आलोचना के क्षेत्र में बल्कि किसी भी संस्कृति, परंपरा और अतीत की जातीय चेतना के मूल्यांकन के क्षेत्र में अत्यंत ही मूल्यवान देन है। 'आलोचना' पत्रिका ने परंपरा के मूल्यांकन के सवाल को

गंभीरता से ग्रहण किया। उसने न केवल अपनी मूल्यवान सांस्कृतिक विरासत की सही छवि को बराबर आलोकित करने का प्रयास किया, बल्कि सांस्कृतिक विरासत की प्रतिगामी-प्रतिक्रियावादी ताकतों के संगठित अभियान से रक्षा भी करती रही है। परंपरा को उसके समग्र रूप में लेते हुए, उसके प्रति 'आलोचनात्मक रुख' अपनाते हुए, उसने गौरवशाली जीवंत-परंपरा को विकसित और पुष्ट करने के लिए कृत संकल्प रचनाकारों-विचारकों की जागरूक पीढ़ी को तैयार भी किया है। नामवर सिंह ने 'आलोचना' पत्रिका के माध्यम से जिस आलोचनात्मक विवेक को जाग्रत करने का प्रयास किया है उससे हिंदी आलोचना में जनतांत्रिक और प्रगतिशील चिंतन के एक स्वस्थ वातावरण को निर्मित करने का कार्य किया। परंपरा के मूल्यांकन के संदर्भ में बिना इस दृष्टि से टकराए आगे नही बढ़ा जा सकता है।

परंपरा के मूल्यांकन के संदर्भ में दूसरी परंपराओं के महत्त्व को भी स्वीकार करने का उद्यम 'आलोचना' पत्रिका के माध्यम से हुआ है। नामवर सिंह द्वारा संपादित 'आलोचना' पत्रिका में ही पहले-पहल 'दूसरी परंपरा की खोज' का प्रश्न उठाया गया। नामवर सिंह ने अपने संपादकीय और लेखों के माध्यम से यह संकल्पना प्रस्तुत की, कि प्रभुत्त्वशाली परंपरा की प्रधान प्रवृत्तियों के कारण अन्य लघुधाराएँ, व परंपराएँ दबा दी जाती हैं, या उन्हें हाशिए पर डाल दिया जाता है। 'आलोचना' पत्रिका उन अन्य दूसरी परंपराओं की खोज का माध्यम बनती हैं। इस प्रकार दूसरी परंपरा की खोज की संकल्पना 'आलोचना' पत्रिका की परंपरा के मूल्यांकन के संदर्भ में एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। इसके माध्यम से दूसरी परंपराओं की महत्ता को स्थापित किया जा सके। हाशिए पर पड़ी उन परंपराओं और धाराओं को पुनर्जीवन दिया जा सके। इस प्रकार, नामवर सिंह ने अपने संपादन के द्वारा 'दूसरी परंपरा की खोज' जैसी अवधारणा हिंदी आलोचना को दी, जिसके माध्यम से प्रभुत्त्वशाली परंपरा के साथ अन्यान्य धाराओं को समान महत्त्व देने की प्रवृत्ति को विकसित किया

जा सके। उसे नगण्य समझते हुए अनावश्यक न समझा जाए। इन्हीं दृष्टियों का विस्तृत-विवेचन तृतीय अध्याय के परंपरा का मूल्यांकन और 'आलोचना' शीर्षक अध्ययन में प्रस्तुत किया गया है।

'आलोचना' पत्रिका को नामवर सिंह ने वास्तव में समकालीन रचनाशीलता से सक्रिय संवाद करती हुई पत्रिका के रूप में विकसित किया। नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' पत्रिका ने इस तथ्य को रेखांकित किया कि 'आलोचना' की सार्थकता अपनी समकालीन रचनाशीलता का मूल्यांकन प्रस्तुत करने में है। समकालीन रचनाशीलता से जुड़कर ही कोई आलोचना, आलोचना कहलाने की अधिकारी है। चतुर्थ अध्याय में समकालीन रचनाशीलता और आलोचना के क्षेत्र में 'आलोचना' पत्रिका का क्या योगदान रहा है। इसे विस्तार से स्पष्ट करने का कार्य किया गया है। नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' पत्रिका की अन्यतम विशेषता समकालीन कवियों की काव्य रचनाओं के प्रकाशन के रूप में देखा जा सकता है। 'आलोचना' पत्रिका मूलतः आलोचना की पत्रिका रही है। किंतु इसके प्रत्येक अंक में अपने समय की युवा कवियों या प्रमुख-प्रतिनिधि कवियों की काव्य-रचनाएँ भी प्रकाशित होती थीं। इसके अंतर्गत सिर्फ हिंदी की काव्य-रचनाएँ ही प्रकाशित नहीं होती थीं, बल्कि अन्य भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त रूसी, स्पेनिश, जर्मन आदि भाषा की प्रमुख रचनाओं का अनुवाद भी प्रकाशित किया जाता था। 'आलोचना' में प्रकाशित होनेवाले प्रमुख हिंदी कवियों के नाम यदि देखे जाएँ तो हमें 'धूमिल', शमशेर बहादुर सिंह, नागार्जुन, त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल, केदारनाथ सिंह, लीलाधर जगूड़ी, मंगलेश डबराल, देवी प्रसाद मिश्र, बोधिसत्व, सुल्तान अहमद, पंकज सिंह, कमलेश, विजयदेव नारायण साही, आदि की काव्य रचनाएँ प्रकाशित हैं।

नामवर सिंह ने 'आलोचना' का संपादन करते हुए समकालीन रचनाशीलता के संदर्भ में कई महत्त्वपूर्ण मूल्यांकन प्रस्तुत किए हैंसाठोत्तरी पीढ़ी की रचनाशीलता को स्पष्ट करने का प्रयास

उनमें से एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। 'युवा लेखन पर बहस' शीर्षक से परिसंवाद आयोजित कर साठोत्तरी पीढ़ी की मानसिक बुनावट और उनकी रचनाशीलता और उसकी पृष्ठभूमि को स्पष्ट करने का कार्य किया गया है। इसी प्रकार 'समकालीन कविता' यानी आपातकालोत्तर कविता के पक्ष-विपक्ष उसकी रचनाशीलता को स्पष्ट करने का प्रयास 'आलोचना' पत्रिका के कई अंकों में प्रकाशित लेखों के माध्यम से किया गया है। समकालीन कविता का संबंध नागार्जुन और त्रिलोचन की कविताओं से जोड़कर देखने का प्रयास भी 'आलोचना' के अंकों में किया गया है।

'आलोचना' पत्रिका ने समकालीन रचनाशीलता के कैनन में जो परिवर्तन किया उसने हिंदी आलोचना में स्थापित कवियों के कैनन में ही बदलाव प्रस्तुत किए। 'आलोचना' पत्रिका में गजानन माधव मुक्तिबोध पर विशेषांक आयोजित कर, मुक्तिबोध को नई कविता के केंद्र में स्थापित किया। 'धूमिल' की महत्ता को स्थापित करने का काम किया। नागार्जुन और त्रिलोचन पर विशेषांक आयोजित कर उनकी जनवादी चेतना और लोकधर्मी प्रकृति से हिंदी पाठकों को परिचित कराया। 'आलोचना' के विशेषांक से पूर्व हिंदी पाठक नागार्जुन और त्रिलोचन की काव्य-रचनाओं से परिचित थे किंतु सबसे पहले उन पर विशेषांक आयोजित कर उन्हें समकालीन कवियों की रचनाधर्मिता से जोड़ने का कार्य किया। 'आलोचना' के माध्यम से नामवर सिंह उन्हें दूसरी परंपरा की लोकधर्मी धारा से संबद्ध करके उनके महत्त्व को स्थापित किया। इसके अतिरिक्त नामवर सिंह निर्मल वर्मा की विचारधारा का जमकर खंडन करते हुए भी, उनके कथाकार रूप के वैशिष्ट्य उद्‌घाटन करने के लिए एक विशेषांक का आयोजन करते हैं।

नामवर सिंह संपादित 'आलोचना' पत्रिका ने हिंदी कथालोचना के विकास में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। समकालीन उपन्यास पर 'आलोचना' का पूरा एक विशेषांक ही प्रकाशित किया गया है। हिंदी कथालोचना पर 'आलोचना' में जिनके सर्वाधिक लेख प्रकाशित हैं, उनमे विजय

मोहन सिंह, मधुरेश और गोपालराय उल्लेखनीय हैं। 'आलोचना' में कथालोचना को लेकर बार-बार प्रकाशित होने से हिंदी पाठकों के सम्मुख इनकी छवि कथालोचक की बनी। यह हिंदी आलोचना को 'आलोचना' पत्रिका की महत्त्वपूर्ण देन है।

इसी प्रकार हिंदी नाट्य-नाटक संबंधी अध्ययन पर मनोहर काले, नरनारायण राय, सत्येंद्र कुमार तनेजा जैसे विद्वानों के कई लेख 'आलोचना' में प्रकाशित हैं। इन विद्वानों के लेखों और शोधपूर्ण अध्ययनों से हिंदी पाठक नाटक संबंधी विविध परिदृश्य से परिचित हो सके। नाट्य-नाटक संबंधी अध्ययन के क्षेत्र में ये विद्वान व्यवस्थित रूप से 'आलोचना' पत्रिका के माध्यम से हिंदी पाठकों के समक्ष उपस्थित हुए।

समकालीन रचनाशीलता का पूरा परिचय उस समय की पुस्तक-समीक्षाओं से किस प्रकार ज्ञात हो, इस प्रवृत्ति का विकास 'आलोचना' पत्रिका के माध्यम से ही हुआ। नामवर सिंह ने 'आलोचना' पत्रिका में प्रकाशित पुस्तक-समीक्षओं को 'पुस्तक परिचय' के रूढ़ स्वरूप से मुक्त कर वैचारिक संघर्ष की चेतना से युक्त किया। यहाँ पुस्तक-समीक्षा के माध्यम से वैचारिक संघर्ष की आधारशिला निर्मित करने का कार्य किया। यह बहस किसी पुस्तक की समीक्षा पर स्वंय पुस्तक लेखक और समीक्षक के बीच साहित्यिक बहस की विषय वस्तु बनती है, या कोई पाठक अपनी प्रतिक्रिया देते हुए देखा जा सकता है। इसके लिए नामवर सिंह ने अपने संपादकीय विवेक का परिचय देते हुए दो पद्धतियाँ विकसित की हैं एक पद्धति तो यह है कि एक साहित्यिक कृति पर दो-दो अथवा तीन-तीन समीक्षकों की समीक्षाएँ प्रस्तुत की गई हैं या एक ही समीक्षक से तीन-तीन, चार-चार पुस्तकों की समीक्षाएँ एक साथ प्रस्तुत की गई हैं, जिससे कृति अथवा समीक्षक की समस्त प्रतिभाओं और संभावनाओं को पाठकों के समक्ष रखा जा सके। इस प्रकार 'आलोचना' पत्रिका ने अपनी पुस्तक-समीक्षाओं को पुस्तक परिचय के रूढ़ अर्थ से मुक्तकर उसे वैचारिक संघर्ष की चेतना

के निर्माण के रूप में प्रस्तुत किया। यह हिंदी आलोचना को 'आलोचना' पत्रिका की महत्त्वपूर्ण देन कही जा सकती है। समकालीन रचनाशीलता और 'आलोचना' का क्या संबंध रहा है, इसे चतुर्थ अध्याय में विस्तार से विवेचित-विश्लेषित किया गया है।

हिंदी आलोचना में आलोचकों के कैनन में पहले आचार्य रामचंद्र शुक्ल, नंददुलारे वाजपेयी और डॉ0 नगेंद्र आदि को ही रखा जाता था, किंतु नामवर सिंह ने आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की षष्ठिपूर्ति पर एक परिसंवाद आयोजित किया, उन पर एक स्मृति अंक आयोजित कर उन्हें हिंदी आलोचना के कैनन में स्थापित किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल की जन्मशती पर दो-दो अंक संपादित किए और डॉ0 रामविलास शर्मा के सत्तरवें जन्मदिवस के अवसर पर विशेषांक आयोजित कर यह स्पष्ट किया कि हिंदी आलोचना का वास्तविक कैनन इन महानुभावों से बनता है। हिंदी आलोचना आचार्य रामचंद्र शुक्ल, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी और डॉ0 रामविलास शर्मा के पद्चिह्नों पर चलकर विकास करेगी। इस कैनन से व्यवस्थित ढंग से बोध करवाने का काम नामवर सिंह ने ही 'आलोचना' पत्रिका के माध्यम से किया। यह हिंदी आलोचना के विकास में 'आलोचना' पत्रिका का अन्यतम योगदान है। इस प्रकार 'आलोचना' के विशेषांक किन रचनाकारों और आलोचकों पर आयोजित है और उनका महत्त्व क्या है. इसे पाँचवें अध्याय में देखा जा सकता है। नामवर सिंह ने 'आलोचना' पत्रिका के माध्यम से साहित्य अध्ययन की नवीनतम प्रवृत्तियों से हिंदी पाठकों को परिचित कराने का कार्य किया। 'आलोचना' पत्रिका में सबसे पहले 'शैलीविज्ञान' जैसी नवीनतम साहित्यिक अध्ययन प्रवृत्ति को प्रस्तुत किया गया है। वहीं 'साहित्य' का समाजशास्त्रीय चिंतन' की प्रस्तावना को भी पहले-पहल 'आलोचना' पत्रिका के पटल पर ही देखा जा सकता है। उत्तर-आधुनिकता और संरचनावाद, आदि प्रवृत्तियों पर हिंदी में सबसे पहला लेख 'आलोचना' पत्रिका में ही प्रकाशित हुआ था। साहित्य का सौंदर्यशास्त्रीय अध्ययन किस प्रकार हो सकता है, उसकी विभिन्न प्रवृत्तियाँ

क्या हो सकती हैं इस विषय पर कई लेख 'आलोचना' में प्रकाशित हैं। हिंदी आलोचना की सबसे जीवंत और दीर्घ समय तक चलते रहले वाली बहस''हिंदी नवजागरण की संकल्पना'' और 'दूसरी परंपरा की खोज'भी 'आलोचना' पत्रिका में प्रकाशित लेखों से ही शुरू हुई। इस बहस ने हिंदी आलोचना को एकदम नवीन दिशा देने का प्रयत्न किया।

नामवर सिंह ने 'आलोचना' पत्रिका के माध्यम से इस प्रवृत्ति की नींव कदाचित पहली बार डाली जिसमें आलोचनात्मक लेखों को धारावाहिक रूप में, अथवा क्रमानुसार प्रकाशित किया। जो आगे चलकर पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुई। इसका अच्छा उदाहरण नंदकिशोर नवल की पुस्तक 'हिंदी आलोचना का विकास' का 'आलोचना' में धारावाहिक रूप से प्रकाशन है। इस प्रकार 'आलोचनात्मक लेखों को शृंखलाबद्ध तरीके से आलोचना में प्रकाशित करना स्वयं हिंदी की साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में अत्यंत सार्थक अवदान के रूप में ग्रहण किया जाना चाहिए। इसी प्रकार के अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्यों का परिचय हम 'नामवर सिंह का संपादकीय विवेक और 'आलोचना' का संपादन शीर्षक अध्याय में देख सकेंगे। हिंदी आलोचना के विकास में 'आलोचना' पत्रिका का क्या योगदान है, इसका सम्यक अध्ययन इस प्रबंध के सातवें अध्याय में प्रस्तुत किया गया है।

नामवर सिंह अपने संपादन में 'आलोचना' में उच्चस्तरीय शोध-पत्र, आलेख, निबंध आदि के साथ साक्षात्कार, गूढ़ और गंभीर पुस्तक-समीक्षाएँ, परिसंवादों और संपादकीय वक्तव्यों के प्रकाशन द्वारा हिंदी आलोचना को विस्तृत ज्ञानानुशासन से जोड़ने का काम करते हैं, जिससे हिंदी आलोचना का एक बौद्धिक वातावरण निर्मित हो सके। नामवर सिंह के मतानुसार आलोचना का तात्पर्य 'शुद्ध साहित्यिक आलोचना' नहीं है, बल्कि इनके नजदीक आलोचना एक व्यापक सांस्कृतिक प्रक्रिया है, जिसको कुछ सामाजिक सरोकार होते हैं, जिसे मुक्तिबोध 'सभ्यता समीक्षा'

THESIS

कहा करते थे। इस प्रकार नामवर सिंह अपने संपादन में विविध ज्ञानानुशासन युक्त सामग्री प्रस्तुत करते हुए हिंदी आलोचकों के समक्ष उसी प्रकार के गूढ़ गंभीर और विविध ज्ञानानुशासन युक्त उक्त आलोचनात्मक दृष्टि का आदर्श प्रस्तुत करने का कार्य किया। आलोचना के स्वरूप को विशुद्ध साहित्य के सीमित क्षेत्र से निकाल कर उसे सभ्यता समीक्षा की सांस्कृतिक प्रक्रिया से जोड़ने का काम किया। इसके लिए उनका आलोचनात्मक विवेक का महत्त्वपूर्ण अवदान है, जिसके कारण उनके संपादकीय विवेक को अत्यंत विस्तृत आधार मिला। इस प्रकार नामवर सिंह ने 'आलोचना' पत्रिका का संपादन करते हुए आलोचना के स्वरूप को ही बदल देने का काम किया। अब आलोचना में प्रवृत्त किसी आलोचक के लिए केवल साहित्य का ज्ञान अपेक्षित नहीं है, बल्कि सम्यक इतिहास-बोध, वैज्ञानिक दृष्टि, सांस्कृतिक चेतना संपन्न होने के साथ-साथ साहित्य की परंपराओं का ज्ञान और विविध ज्ञान के अनुशासनों की सम्यक जानकारी के साथ तीव्र अन्वीक्षण बुद्धि और रसग्रहिणी प्रज्ञा की अपेक्षा होगी। अतः नामवर सिंह के संपादन के माध्यम से 'आलोचना' पत्रिका की सामग्री ने इस प्रकार से हिंदी पाठकों और आलोचकों के आलोचनात्मक विवेक के निर्माण का कार्य किया है। इसके माध्यम से हिंदी आलोचना के लिए ऐसा बौद्धिक वातावरण निर्मित हुआ कि आगामी आलोचना का सर्वोत्तम उसी वातावरण की देन होगी।

'आलोचना' पत्रिका के माध्यम से हिंदी आलोचना में एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण योगदान हिंदी की 'आलोचना की भाषा' का विकास के रूप में देखा जा सकता है। नामवर सिंह ने 'आलोचना' का संपादन करते हुए हिंदी की प्रगतिशील आलोचना के विकास के लिए जो लड़ाई लड़ी हैं, उसमें हिंदी की अपनी 'आलोचना की भाषा' का क्या रूप हो यह मुद्दा भी शुरू से जुड़ा रहा है। हमारी दृष्टि में 'आलोचना' पत्रिका ने हिंदी 'आलोचना' की भाषा' के निर्माण में अपनी महती भूमिका का निर्वाह किया है। हिंदी आलोचना के सम्मुख 'आलोचना' पत्रिका में प्रयुक्त भाषा ही हिंदी आलोचना

की सही व जातीय भाषा हो सकती है।

इसके अतिरिक्त, 'आलोचना' पत्रिका में कई प्रतिभाओं को प्रकाशित कर प्रोत्साहित किया, वहीं कुछ आलोचकों और चिंतकों को बार-बार छाप कर उनकी प्रतिभा से हिंदी आलोचना जगत को परिचित कराया। आज हिंदी में जितने बड़े आलोचक-चिंतक दिखाई पड़ते हैं, उनका संबंध किसी-न-किसी रूप में 'आलोचना' पत्रिका से अवश्य रहा है। नामवर सिंह के संपादकीय विवेक का ही अवदान है, जिससे हिंदी आलोचना का वृहत्तर आयाम निर्मित हो सका। उन्होंने 'आलोचना' का संपादन करते हुए हिंदी आलोचना को विशुद्ध साहित्यिक क्षेत्र की सीमा से निकालकार उसे व्यापक सांस्कृतिक क्षेत्र में जोड़कर व्यापक आधार प्रदान करते हुए उसे 'सभ्यता-समीक्षा' का रूप दिया। कहना न होगा कि उन्होंने 'आलोचना' पत्रिका को गूढ़-गंभीर चिंतन युक्त सामग्री से ऐसे बौद्धिक वातावरण का निर्माण किया जो समस्त साहित्यिक-सांस्कृतिक गतिविधियों को आलोचनात्मक होकर देख सके। इस प्रकार यह नामवर सिंह का आलोचनात्मक विवेक और संपादक-व्यक्तित्व की ही महत्त्वपूर्ण देन है जिसने कितने ही आलोचकों-पाठकों का आलोचनात्मक विवेक निर्मित किया और 'आलोचना' को हिंदी की आलोचनात्मक विवेक की पत्रिका के रूप में स्थापित किया। वह न केवल हिंदी की महती पत्रिका बनी बल्कि भारतीय साहित्य की परीक्षा करनेवाली एक अप्रतिम पत्रिका भी सिद्ध हुई। उसका स्थान इतिहास के हृदय में सुरक्षित है।

10-01-2014

(जावेद आलम)